भगत सिंह और उनके साथियों की याद में

ये नौजवान कौन हैं?
किसान संघर्ष में मजदूर कहाँ?

शहीद दिवस केवल गर्मजोशी का दिन नहीं है, न ही वह राष्ट्रवाद और आदर्शवाद का दिन है। भगत सिंह और उनके साथियों के विचारों को केवल भावनाओं में नहीं बांधा जा सकता। उनके जीवन और विचार अपने समय के संघर्षों के फल थे जिनमें किसानों, श्रमिकों और अन्य गरीब तबकों के दैनिक संघर्ष सबसे महत्वपूर्ण थे। उन शहीदों के लिए सबसे बेहतरीन श्रद्धांजलि आज इन संघर्षों की प्रखरता ही हो सकती है। परन्तु इन संघर्षों को प्रखर तभी किया जा सकता है जब इन संघर्षों के बारे में समझ और चेतना का विकास हो। आइए, इस मौके पर चल रहे किसान आंदोलन पर कुछ विचार करें।

अन्य आंदोलनों की तरह वर्तमान किसान आंदोलन भी बहुआयामी है। उसे समग्रता में समझने के लिए हमें औपचारिक नारों, चेहरों और बयानों से आगे जाना होगा। इस आंदोलन में शुरुआती दिनों से नौजवानों का मजमा भारतीय समाज, मुख्यतः ग्रामीण समाज के बारे में, कुछ महत्वपूर्ण बात बताता है, जिसे अधिकांश लोग नहीं समझ पा रहे या फिर उसके जिक्र को घोषित मुद्दों से भटकाव के रूप में देखते हैं। परंतु इस पूरे आंदोलन को स्फूर्ति इसी तबके से मिल रही है।

पंजाब में जहां सरकारी आंकड़े साफ बताते हैं कि नौजवान बेरोजगारी दर 21% है, वहां बहुत मुश्किल नहीं है यह समझना कि इस आंदोलन के अंदर इनका भी दर्द और आक्रोश शामिल है। इनके लिए यह आंदोलन केवल पुश्तैनी जमीन और जमीर बचाने की लड़ाई नहीं है। ये जिंदा रहने की लड़ाई लड़ रहे हैं।

आज नवउदारवाद के दौर में स्थायी रोजगार पुरानी बात हो गई है, और वैसे भी हिंदुस्तान जैसे देशों में अपार जनसंख्या पूंजीवादी विकास का मूलाधार रही है, जिसने कई दशकों से सस्ता श्रम मुहैय्या कराया है और जिसे श्रम कानूनों का कभी फायदा नहीं मिला है (और इसी वजह से कानूनी बदलावों का सवाल इन मजदूरों को अमूर्त लगता है)।

याद रहे इन्हीं इलाकों में इस आंदोलन से पहले जो सबसे बड़ा और तीव्र आंदोलन छिड़ा था वह इन्हीं नौजवानों के द्वारा था। जाटों, गुज्जरों और अन्य कृषक जातियों के नौजवान घटती स्थायी नौकरियों में आरक्षण के लिए पिछले दो दशकों में कई बार सड़कों पर उतर चुके हैं। यही नौजवान आज इस आंदोलन में दिख रहे हैं —और वे कोई कोरे आदर्शवाद अथवा नौजवान खून की वजह से यहां नहीं मौजूद हैं —हिंदुस्तान में 90% प्रतिशत किसानों का परिवार सीमांत की श्रेणी में आता है, उनका जीवन किसानी के साथ-साथ छोटी-बड़ी नौकरियों अथवा स्व-रोजगारी से चलता है। आँकड़े बताते हैं कि ज्यादा से ज्यादा किसानों का जीवन-निर्वाह महज खेती से नहीं होता। यही नहीं, पूंजीवाद में बदलतीं सामाजिक आवश्यकताएं ठीक ठाक किसानों को भी खुद नहीं तो उनके बच्चों को गैर-कृषि उद्योगों अथवा सर्विस सेक्टर में अपनी श्रम शक्ति बेचने को मजबूर करतीं हैं। इस अर्थ में हम ग्रामीण समाज को मजदूरों की नर्सरी के रूप में भी देख सकते हैं।

"रोजगार पाने की अनिश्चितता और अनियमितता, बार-बार श्रम की मंडी में मजदूरों का आधिक्य हो जाना और इस स्थिति का बहुत देर तक बने रहना" (मार्क्स) — यही तो आज का सत्य है। आज मजदूरों का चरित्र और संघर्ष इसी अवस्था में विकसित हो रहा है। लगातार एक काम के बाद दूसरे काम की तलाश, काम न मिल पाने से तमाम तरह के स्व-रोजगारों में लगना, जिनमें पुश्तैनी जमीन पर खेती भी शामिल है —चाहे वे खुद अन्य परिवार सदस्यों के साथ मिलकर करें, या फिर कुछ खेत मजदूर लगाकर करें —किसी एक काम से सारी सामाजिक आवश्यकताओं को पूरा करना मुश्किल है। आज कृषि बेशीकृत आबादी को जिंदा रखने का एक साधन हो गया है। चल रहे किसान आन्दोलन ने कई इलाकों में बेरोजगारों को भी सड़क पर उतरने की प्रेरणा दी है। यही आबादी है अल्प-रोजगारों और बेरोजगारों की जो अगर संगठित हो जाएँ तो पूंजीवाद की व्यवस्था को चीर दें।

चल रहे किसान आंदोलन के यहां तक पहुंचने में इस तबके का अहम योगदान रहा है। स्वाभाविक ही है कि इसका तेवर पुराने किसान आंदोलन की तरह नहीं है। यह आंदोलन हरित क्रांति के बाद उठे सत्ता में अधिकार मांगते किसान नेतृत्व का आंदोलन नहीं है। यह उस समय का आंदोलन है जब पूंजी लोगों के घरों में घुसकर उनके श्रम-काल का दोहन और श्रम की डकैती कर संचय की प्रक्रिया चला रही है। नवउदारवाद पूंजीवाद के स्थायी संकट का दौर है —उसकी बर्बरावस्था है।

बाहर से मजदूरों की भागीदारी मांगने वाले समझ नहीं पाते कि अधिकांश किसान परिवार के लिए आज किसानी का मतलब क्या है। इन परिवारों के नौजवान ही मजदूर वर्ग के हिस्सा भी हैं। उनकी लड़ाई अगर एक तरफ रोजगार पाने की है, तो दूसरी तरफ आवश्यक्ता की पूर्ति करने वाले रोजगार के अभाव में अपनी श्रमशक्ति को बनाए रखने के लिए खेती को बचाने की लड़ाई भी है।

वित्तीयकरण के दौर में पूंजी सारे उद्यमों और उद्योगों को बहुत ही आसानी से एक ही सूत्र अथवा नेटवर्क में बांधती है — चाहे वह मजदूरों के शोषण पर आधारित उद्योग हो अथवा वह खुद की मेहनत से चलता स्वरोजगार या कोई लघु उद्योग। तमाम उत्पादन प्रक्रियाओं को एक दूसरे के सामने कर पूंजी उन्हें केंद्रीकृत करती है। इस दौर में तमाम श्रमजीवियों का जीवन बाजार और प्रतिस्पर्धा की अनिश्चितताओं का शिकार हो जाता है। इन्हीं अनिश्चितताओं के खिलाफ स्थायी, अस्थायी और स्व-रोजगार श्रमिकों की लड़ाई है। और आज के किसान आंदोलन को भी इसी रूप में समझने की जरूरत है।

फरवरी 1931 में नौजवान राजनीतिक कार्यकर्ताओं के नाम एक पत्र में भगत सिंह तात्कालिक राष्ट्रवादी आंदोलन को "मध्यवर्गीय दुकानदारों और चन्द पूँजीपतियों के बलबूते किया जा रहा" संघर्ष बताते हैं। वे कहते हैं कि ये वर्ग "अपनी सम्पत्ति या मिल्कियत खतरे में डालने की जुर्रत नहीं कर सकते"। शोषित वर्गों की वर्गीय क्षमताओं की ओर इशारा करते हुए भगत सिंह कहते हैं कि "वास्तविक क्रान्तिकारी सेनाएँ तो गाँवों और कारखानों में हैं — किसान और मजदूर।" इन क्षमताओं को सुधारवादी लक्ष्यों तक सीमित रखना नामुमकिन है — "यह सोये हुए सिंह यदि एक बार गहरी नींद से जग गये तो वे हमारे नेताओं की लक्ष्य-पूर्ति के बाद भी रुकने वाले नहीं हैं।"

चल रहे किसान आंदोलन के अंदर भी वे वर्गीय क्षमताएं मौजूद हैं जिनकी बात भगत सिंह कर रहे थे। आज परिवर्तनकारी विचारधारा के प्रवर्तकों को वस्तुस्थिति की वास्तविक व्याख्या करते हुए इन वर्गीय शक्तियों को पहचानना होगा और उनके साथ खड़े हो कर अगले संघर्षों की तैयारी करनी होगी।

इंकलाब जिंदाबाद!

कॉरेस्पोंडेंस कलेक्टिव

भागीदारी, पड़ताल, आलोचना, संवाद और हस्तक्षेप

संपर्क: *corcollectiveindia@gmail.com/* 9818625860